महासिद्ध नारोपा – जीवनी

नमो गुरुज्ञानसिद्धाय

भन्ते छेवांग रिगजिन
प्राध्यापक
केन्द्रीय बौद्ध विद्या संस्थान, लेह

भारतवर्ष में बौद्ध बजयान धर्म का उद्‌भव महासिद्ध तिल्लोपद से होता है। गुरू तिल्लोपद का जन्म–स्थान विष्णुनगर (सम्भवतः पूर्वी भातर) था। वे यहां रहकर अपरिमित शिष्य–समुदाय को धर्म का उपदेश करते थे। इन शिष्यों में एक नारोपाजी भी थे।

नरोपा का जन्म 1066 में काश्मीर के एक राजघराने में हुआ था[1]। उनके पिता शान्तिवर्मा (शुमवर्मा, कल्याण वर्मा) एवं माता श्रीमती थी। बच्चे का जन्म होते ही माता–पिता ने इनके जीवन के बारे में जानने के लिए ऋषि–मुनियों को बुलाया। ऋषि ने बच्चे के अच्छे लक्षण देखकर कुमार को सर्वभद्र नाम दिया।

तत्पश्चात् वैभाषिक सम्प्रदाय के विनयधर आचार्य जिनमित्र से उन्होंने प्रथम बौद्ध धर्म की शिक्षा–दिक्षा ली। अल्प समय में ही उन्हें, सम्पूर्ण बौद्ध वाड्0 मय का ज्ञान हो गया था।

इसके बाद वे श्री नालन्दा महाविहार में उच्च शिक्षा के अध्ययन के लिए गए। यहां इन्होंने बौद्ध बजयान के गम्भीर विषयों का अध्ययन–अध्यापन किया। चिलूपा नामक आचार्य से इन्होंने सारे महत्वपूण्र वजयानी ग्रन्थों की टीका भी लिखी।[2] इस समय इनका यश चारों ओर सूर्य की किरणों की भांति फेल गया। इस कारण उनका नाम यशोभद्र (स्त्रथानटाक जड0पो) पड़ गया।

प्राचीन काल में प्रकाण्ड विद्वान ही विहार के द्वाररक्षक के रूप में नियुक्त होते थे। इस समयं नालन्दा के उत्तरी द्वार की रक्षा का दायित्व आचार्य शान्तिपाजी सम्भाल रहे थे। उनके असामयिक परिनिर्वाण के बाद विहार के 500 विद्वानों में भी द्वाररक्षक के योग्य कोई नहीं था। तअः इसके बाद महासिद्ध नारेपा जी श्री नालन्दा के उत्तरी द्वाररक्षक के प में नियुक्त हुए।[3] यह अजीब सी बात

4. नडपा– को कोई मदिरा बेचेने वाला मानता है। दूसरी मान्यता है क्षत्रिय कुल का, डूकपा पदपा करपो के इतिहास के अनुसार कश्मीरी ब्राह्मण थे। यह सत्य भी लगता है क्योंकि नाडपा नारोपा, शब्द नरोत्तमपाद का अपभ्रंश है।
2. वुनख्येन पद्यकरपो इतिहास पृ0 191 2006 इतिहास
3. दूसरी मान्यता नारोपजी को विकमशील के उत्तरी द्वार रक्षका माना है। पझकरपो इति0 पृ0 203 सन् 2006 मुद्रित–डुकपा पलोरी फ्रांस।

सगती है, कि प्रकाण्ड विद्वानों को द्वाररक्षक के रूप में क्यों रखा जाता था? सम्भवतः इसका अर्थ यह हो सकता है कि दर्शन के प्रति कुदृष्टि रख्कर तर्क करने वालों को द्वार से ही तर्क–वितर्क के द्वारा परास्त कर वापस कर दिया जाता हो।

श्री नालन्दा के मुख्य आचार्य के पद पर आसीन होने के बाद नारेपा ने अपने सम्पूर्ण समय भिक्षुओं को उपदेश देना, दीक्षा देना, तथा अभिष्ट रखकर तर्क करने वालों को द्वार से ही तर्क–वितर्क के द्वारा परास्त कर वापस कर दिया जाता हो।

श्री नालन्दा के मुख्य आचार्य के पद पर आसीन होने के बाद नारोपा ने अपने सम्पूण्र समय भिक्षुओं को उपदेश देना, दीक्षा देना, तथा अभिषेक आदि कार्यों में लगाया। यहां इन्हें अभयकीर्ति के नाम से जाना जाने लगां

इसके बाद वे बारह महापण्डितों के साथ पुनः कश्मीर आये। अपने पुत्र को देखकर पिता जी को दुःख हुआ क्योंकि पितजी उन्हें राज्याधिकार सोपना चाहते थे। पिता जी को दुःखित देखकर उनकी बात रखने के लिए उन्होंने कुछ समय तक राजशासन सम्भाला।

कुछ समय बाद राजशासन को भी त्यागकर वे सदगुरू की खोज में निकल पड़े। इस दौरान इन्हें कई कठोर परिश्रमों तथा घोर तपस्या से गुजरना पड़ा। अन्त में गुरू तिल्लीपा जी से मिलकर उनसे सम्पूर्ण उपदेश पाने के लिए उन्हें तेरह प्रकार के तप एवं साक्षात्कार को पार करना पड़ा। अन्त में वे तिल्लीपा जी के सम्पूर्ण उपदेशों को सुनकर सुदूर एकान्त में उपासना करने चले गए। साधना के द्वारा उन्हें सर्वधर्म के वास्तविकता का ज्ञान हो गया और सिद्धि को प्राप्त हो गए। नारोपा जी के धर्म– प्रचार का प्रमुख केन्द्र उत्तर भारत ही रहा। यहां कश्मीर में फूलहरि (पुष्पहरि) में रहकर उन्होंने लोगों को धर्म का उपदेश दिया। यह साधना केन्द्र वर्तमान पमपूर के समीप खुनुमो नामक पर्वत की चोटी पर हैं। कश्मीरी हिन्दू इससे हरिशर (हरिश्वर) के नाम से जानते हैं और तीर्थ मानते है। यहां से वे जंस्कार आए। जोड0 कुल नामक गुफा में श्री चक्रसवंर की साधना की और 700,000 चक्रसंवर मन्त्र का उच्चारण किया। इससे उन्हें चक्रसंवर का साक्षात् दर्शन हुआ। तत्पश्चात् वह लामायुरू गए। यहां पर वे साधना पर बैठे जहां आज भी लामयुरू की मुख्य संघ–कक्ष में नारेपाजी की गुफा है।

नरोपाजी की इस साधना–परम्परा को भोट देश में लामा मरपा लोचावा

जी ने फैलाया। वे भारत में तीन बार आकर सम्पूर्ण उपदेश एवं अभिषेक लिये। इन्हीके द्वारा भोट देश में इस परम्परा का उद्‌भव हुआ।[4] लामा मारपा जी के शिष्यों में मिलारसपा जी मुख्य थें अउन्होंने इस साधना–परम्परा द्वारा एक ही जीवन में बुद्धत्व प्राप्त किया।

जतत्पश्चात् सन् 1661 में गुरु चड0पा ग्यारस जी का जन्म हुआ,जो नारोपा जी का सात्क्षात रूप है। इन्होंने इस धर्म का भोट देश ही नहीं सम्पूर्ण हिमालयीय क्षेत्रों में प्रचार किया जो आज भी जीवित है। इस साधना परम्परा के योगियों व अनुयायियों को डूकपा के नाम से जाना जाता है। डूकपा सम्प्रदाय का उद्‌भव चड0पा ग्यारस से ही होता है। इनके अभी तक बारह अवतार हुए हैं। जो आर्य अवलोकितेश्वर एवं नारोपा का साक्षात् रूप मानते है। इनके पास ही प्रसाद के रूप में नारोपा जी के छः आभूषण मौजूद हैं, जो अस्थियो से निर्मित हैं। कभी–कभी अपने जीवन में एक या दो बार इस महत्वपुर्ण आभूषणें को पहनकर लोगों को दर्शन भी देते हैं। वर्तमान परम मूज्य बारहवें ग्यलवांग डुकपा जी ने इसे अब तक तीन बार पहनकर लोगों को दर्शन दिया जो पहले कभी नहीं हुआ। यह भी एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। इस दौरान देश विदेश से लोग सहस्रों की संख्या में दर्शनार्थ उपड पड़े। दर्शन पाने वाले सभी श्रद्धालुओं को इनके हृदय–प्रदेश से प्रकाश निकलता दिखाई पडता था, जिससे श्रद्धालुओं की मनोकामना पूरी हो जाती थी।

इसी तरह तब भी नारोपा जी के एक–एक अंग एवं वस्तुओं से लोगों की इच्छा पूरी होती थी। वे केवल अपने सिद्धि के बल से ही लोगों का कल्याण करते थे। तो हम कह सकते हैं, कि नारोपा जी कश्मीर ही नहीं सम्पूर्ण भातरवर्ष के बौद्ध विहारों के महान् पण्डित एवं भिक्षु थे। उनके अंसख्य शिष्य थे, जिनमें दीपड्0 कर श्रीज्ञान एवं भेट देश का लामा मरपा लेखवा जी–प्रमुख थे। इस प्रकार इन्होंने अपरिमित विनेय जनों का (कल्याण) अर्थ पूरा किया और अन्त में इसी शरीर के साथ खेचर भूमि चले गए।

---

4. दिव, अन्तराभव (वर दो) मकान्ति, चण्डली, ग्यू–लुस, स्वंप्रदश्चन